अस्पृश्यता निवारण में भारतीय मनीषियों का योगदान

*डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा

जाति व्यवस्था के उदय की चाहे जो भी परिस्थितियाँ रही हो, वास्तविक व्यवहार में यह सर्वाधिक अन्यायपूर्ण व्यवस्था है। वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में इसका कोई औचित्य नहीं है। यह लेख भारतीय जाति व्यवस्था में निहित अस्पृश्यता के उद्‌गम, विकास और उसके बहुआयामी सामाजिक–राजनीतिक प्रभावों का विश्लेषण करता है। लेख में यह प्रतिपादित किया गया है कि अस्पृश्यता की जड़े धार्मिक परम्पराओं सामाजिक संरचनाओं तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों में गहराई से जमी हुई है जिसके कारण दलित समुदाय लम्बे समय तक शोषण, बहिष्कार और अवसरवंचना का सामना करता रहा है। अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि डॉ. अम्बेडकर ने शिक्षा, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, सांवैधानिक अधिकारों और सामाजिक लोकतंत्र को अस्पृश्यता उन्मूलन का प्रभावी साधन माना है। समाज के समग्र पुनर्गठन, जाति आधारित विभाजनों के समाप्तिकरण तथा नैतिक मानवीय मूल्यों की स्थापना को भारतीय मनीषी स्थायी समाधान के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

अध्ययन के उद्‌देश्य–

1. अस्पृश्यता के उद्‌गम और सामाजिक स्वरूप को समझना।
2. अस्पृश्यता की व्याख्या अम्बेडकर की दृष्टि से करना।
3. अस्पृश्यता उत्पत्ति से उत्पन्न सामाजिक समस्या की पहचान करना।
4. अम्बेडकर के सुझाव।
5. सामाजिक न्याय, समानता स्थापना की दिशा में स्तरीय मनीषियों का दृष्टिकोण।

शोध पद्धति–

ऐतिहासिक, वर्णनात्मक, विश्लेषणनात्मक पद्धति प्रयुक्त की गई है। अस्पृश्चता–अतिव्यवस्था उद्‌गम विकास, सामाजिक समस्याएँ परिस्थिति अम्बेडकर द्वारा बताऐ गए समाधानों का व्यवस्थित विवरण, अम्बेडकर के ग्रंथ, भाषणों का विश्लेषण द्वितीयक साहित्य का प्रयोग सामाजिक अनुभव पर आधारित निष्कर्ष व्याख्या की गई है। महर्षि दयानन्द स्वामी, विवेकानन्द, महात्मा गांधी के विचारों का विश्लेषण समाहित है।

अस्पृश्यता का उदय

भारत में मुस्लिम संस्कृति के आगमन से पूर्व आधुनिक प्रकार के शौचालयों की व्यवस्था नहीं थी। मैला ढोने का काम भी नहीं होता था। प्रायः भारतीय खेतों, निकटवर्ती वनस्थलों, रिक्त स्थानों, दूर दराज में मैला, शौच त्याग करते थे। ग्रामों में तो आज भी ऐसा देखा जा सकता है। एक स्थान पर मनुस्मृति में स्पष्ट कहा है 49–51 "लकड़ी, मिट्टी का ढेर, शाखपत्र, घास आदि की ओट लेकर प्रयत्नपूर्वक वाणी पर संयम रखते हुए मल त्याग करें।"

धर्म शास्त्र का यह निर्देश सुस्पष्ट करता है कि मल का त्याग खुले में होता था। मुस्लिम संस्कृति के आगमन से ही पर्दा प्रथा, मैला ढोने का नीच काम प्रथम बार आरम्भ हुआ। मुस्लिम आक्रमणकारी शासकों ने हरम में रहने वाली स्त्री व बच्चों के मल को हरम से बाहर ले जाने के लिए उन शुद्रों को बलपूर्वक चुना जो पैतृक कर्म, कला निर्माण का कार्य करते थे। जन साधारण में मैला ढोने वाले वर्ग विशेष के प्रति मन घृणा ने घर कर लिया। आगे चलकर यही विचार परिस्थितिजन्य भाव उत्पन्न कर अछूत छुआ–छूत में उदित हुआ। छुआ–छूत, घृणा, उपेक्षा की दुर्भावना सामाजिक रूग्णता के रूप में विकसित हुई, जिसका वर्ण व्यवस्था की मूल भावना से कोई सम्बन्ध नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध सुविधाओं पर बनी रहने वाली स्वार्थपरता से है। इतिहास द्वारा यह माना जाता है, कि छुआछूत जैसी निर्मम सामाजिक आर्थिक बेड़ियों में मनुष्य द्वारा मनुष्य को जकड़ने का चलन पुष्य मित्र शुंग के समय से आरंभ हुआ

अस्पृश्यता पर अम्बेडकर के विचार

प्रशासनिक व्यवस्था मानव प्रकृति अहम् शील है। वह अपने को श्रेष्ठ मानता है और दूसरों को तुच्छ मानता है। अपने दोष को छिपाने के लिए जाति व्यवस्था बना देते हैं। अम्बेडकर के अनुसार आरंभ में जाति प्रथा नहीं थी। समाज में कुछ स्वार्थी लोगों ने जो ऊँचे स्तर के थे, कमजोर लोगों से उनकी इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती काम कराना आरम्भ कर दिया। इन कमजोर लोगों को शिक्षा प्राप्त करने, व्यापार करने, धन इकट्ठा करने और हथियार रखने से वंचित कर दिया, जिससे वे विरोध न कर सकें और अपनी दासता दूर न कर सकें। इस प्रकार जातिवाद को अपनाकर शुद्रों को अपंग कर दिया गया। जातिवाद से अम्बेडकर के अनुसार कार्य क्षमता नहीं बढ़ती। मनुष्य को इच्छानुसार कार्य नहीं मिलता अतः उन्होंने कहा, जाति प्रथा को नष्ट करना आवश्यक है। पूर्व बौद्धकाल से ही (हिन्दू समाज) भारतीय समाज अवनति की ओर चला गया था। समाज का एक वर्ग देवता बन गया तो दूसरा वर्ग निम्न स्तर पर ढकेल दिया गया था। ऊँच–नीच का वातावरण पनप चुका था। इस प्रकार समाज में अस्पृश्यता तथा अन्याय का बोलबाला हो चला था। ऐसी स्थिति के लिये मूलतः ब्राह्मणवाद तथा वर्णाश्रम धर्म में व्याप्त विकृतियां उत्तरदायी थीं। इस सामाजिक स्थिति के प्रति सर्व प्रथम विद्रोह भगवान बुद्ध ने किया था। उनके पश्चात् सदियों तक निम्न जाति के लोगों को मानव सम्मान प्राप्त हुआ, परन्तु ब्राह्मणवाद के कुचक्र में फिर से शुद्रों तथा अन्य जाति के लोगों की स्थिति शोचनीय हो गई। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक आते–आते तो उनकी स्थिति ऐसी हो गई कि उनको देखना, उनका साया तथा छुआ जाना भी उच्च वर्ग के लोगों को दूषित कर देता था। इस प्रकार शुद्रों एवं अछूतों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई। ब्राह्मणवाद से तंग आकर बहुत से शुद्र अछूत मुसलमान होने लगे थे। डॉ. अम्बेडकर के जन्म के समय शुद्रों व अछूतों की हालत तो और भी दयनीय थी। इस काल में इनकी स्थिति ऐसी थी जिसकी कल्पना करना सभ्य मानव प्राणियों के लिए असंभव है।

डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं अपनी पुस्तक 'एनिहिवेशन कास्ट' में यह लिखा है कि पेशवाओं के शासनकाल में महाराष्ट्र में यदि कोई सवर्ण हिन्दू सड़क पर चल रहा हो तो अछूत को वहाँ चलने की आज्ञा नहीं थी, उसकी छाया से कहीं हिन्दू अपवित्र न हो जाये। यह अनिवार्य था । प्रत्येक अछूत अपने गले में काली डोरी बांधे ताकि सवर्ण हिन्दू उसे पहचान ले और भूल से स्पर्श न कर बैठे। राजधानी पूना में अछूतों के लिए यह राजाज्ञा थी कि वे कमर में झाड़ू बांध कर चलें ताकि उनके चलने से जमीन पर अंकित चिह्न झाड़ू से मिटते चले जाएँ क्योंकि उनके पद–चिह्नों पर सवर्ण हिन्दू पैर रखने से अपवित्र हो जाते थे। इतना ही नहीं पूना में अछूतों को गले में मिट्टी को हांडी भी लटका कर चलना पड़ता था, ताकि वे अपने थूक को उसी में कर लें क्योंकि उनका भूमि पर गिरा थूक न केवल भूमि को अपवित्र बनाता है, बल्कि सवर्ण हिन्दू भी उस पर पैर डालने से अपवित्र हो जाते।

दलित समाज में मुख्य नियोग्यताएँ निम्न थीं

1. धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन, वाचन और श्रवण पर निषेध,
2. पूजा–पाठ और मन्दिर में प्रवेश करने पर निषेध,
3. उत्तम तथा स्वच्छ वस्त्र एवं आभूषण धारण करने की मनाही,
4. झोपड़ी व टप्पर के अतिरिक्त अच्छे मकान बनाने और उसमें रहने पर प्रतिबन्ध,
5. रथ व घोड़े की सवारी पर मनाही,
6. सवर्ण बस्तियों में आवासीय मकान बनाने और रहने पर प्रतिबन्ध, सार्वजनिक तालाब, कुओं से पानी लेने पर प्रतिबन्ध,
7. सार्वजनिक धर्मशालाओं, भोजनालयों आदि में प्रवेश पर प्रतिबन्ध, समान नागरिक अधिकारों से वंचित,
8. सवर्णों के स्पर्श से वंचित गधा, कुत्ता, सुअर के अतिरिक्त गाय जेसे पशुओं को रखने का निषेध था।

वैसे 19वीं शताब्दी के अन्त तक अछूतों की हालत पशुओं से भी बदतर थी। अंग्रेजों ने इसे समाप्त करने के स्थान पर बढ़ाने में योगदान दिया। ब्रिटिश लेखक बार–बार यह दर्शाने की कोशिश करते रहे कि हिन्दू समाज हमेशा से इसी प्रकार का था।

अस्पृश्यता के समाधान में विभिन्न मनिषियों का योगदान

समाज में विकृतियों का जन्म होता है. तो समाज में स्वयं को सुधारने की क्षमता और वैसी ही चेतना भी भारतीय समाज में समय–समय पर उत्पन्न हुई और इन विकृतियों के सुधार का प्रयास भी होता आया हैं। 17वीं शताब्दी में महाराष्ट्र में चक्रधर स्वामी ने महानुभाव पंथ की स्थापना की जिसके अधिकांश सदस्य ब्राह्मण थे। पंथ के ब्राह्मण ने ब्राह्मणवाद पर प्रहार किया। चारों वर्णों के स्त्री–पुरुषों को संन्यास का अधिकार प्रदान किया गया। ब्राह्मण और अछूत समान हैं, दोनों के मानव शरीर हैं। दोनों के द्वारा ही पाप–पुण्य हो सकते हैं। ब्राह्मण व अछूत दोनों ही नीच कर्म कर सकते हैं। अतः जन्म–आधार पर ऊँच–नीच मानना महा पाप है। ईश्वर भक्ति का सबको अधिकार है। ईश्वर के समक्ष सभी मानव प्राणी समान हैं। भागवत धर्म की परम्परा में सभी जाति के संत पैदा हुए है। जैसे तुकाराम, चोखाराम, प्रार्थना समाज, गोपाल कृष्ण, वलंगकर (महाराष्ट्र) महात्मा फुले, शशीधर बंद्योपाध्याय (बंगाल में), उत्तर प्रदेश में स्वामी अछूतानन्द, बड़ौदा में स्याजीराम गायकवाड़ आदि। राष्ट्रीय स्तर पर राजाराम मोहन राय, उनका ब्रह्म समाज, स्वामी दयानन्द और आर्य समाज का विशेष उल्लेख किया जा सकता है। जालंधर आर्य समाज में रहतियों की शुद्धि, 1912 में मेद्योद्वारा सभा का गठन कर शुद्धि के इस कार्य को व्यवस्थित रूप दे दिया गया। 1921 में दिल्ली में दलितों द्वारा सभा की स्थापना की गई। सभा के निम्न उद्देश्य रखे गये –

1. भारत में दलित जातियों में सदाचार का प्रचार
2. उनको धर्मच्युत करने वाले ब्राह्मणों से बचाना
3. घृणा के मिथ्या संस्कारों को दूर करना। दलितौद्धार इन कार्यों की विशेषता थी, कि स्पृश्य और अस्पृश्य जातियों के परम्परागत भेद को मिटाकर समान स्तर पर लाने का यत्न किया जाता था । दलितों को

जाति का अलग हिस्सा न मानकर उन्हें समान मानवता के पूरे अधिकार देना आर्य समाज के दलितोद्धार का मुख्य कार्य था। स्वामी दयानन्द ने वेदों के सहारे हिन्दू वर्णाश्रम धर्म का समर्थन किया, परन्तु इस धर्म ने जिस जाति प्रथा, छुआ–छूत की बुराई को पैदा किया, उसकी कटु आलोचना की, निश्चय ही जाति व्यवस्था विरोध की आवाज उठाकर दलितों एक नई आशा की लहर बिखेर दी, वे विश्वास करने लगे कि सुकर्म कर अपने आपको ऊँचा उठा सकते हैं।

स्वामी विवेकानन्द

जात–पाँत, छुआ–छूत, सम्प्रदायवाद जैसी विषमताओं के विरोधी थे। उन्होंने भारत में व्याप्त इन बुराइयों और रूढ़िवादिता पर कटु प्रहार किया। स्वामी विवेकानन्द के हृदय में गरीबों के और दलितों के लिए असीम श्रद्धा, सहानुभूति थी। जाति प्रथा को देश, समाज के लिए आत्म–घातक मानते थे। जाति व्यवस्था जिस रूप में प्रचलित है, उसके विरोधी थे। जाति का वास्तविक अर्थ उनकी दृष्टि में भिन्न था, इसे विचित्रता की स्वच्छन्द गति मानते थे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रकृति के, अपने विशेषत्व को प्रभावित करने की स्वाधीनता थी, परन्तु जाति व्यवस्था ने भारत में इस भाव का परित्याग कर दिया और वह अपने अधःपतन की स्थिति में आ गया।

गांधी

अस्पृश्यता ईश्वर और मानवता दोनों के प्रति अभिशाप है। छुआ–छूत की घृणित रूढ़ि ने हिन्दू धर्म को विकृत कर दिया है। छुआछूत एक बीमारी है। मानसिक जड़ता और झूठे अभिमान की निशानी है। झूठी अस्पृश्यता घातक और नैतिकता की भावना के विरुद्ध है ।

दलित विकास संबंधी गांधीवादी उपागम के आधारभूत तत्व–

1. समेकित दृष्टिकोण समन्वित दृष्टि

अस्पृश्यता के प्रति समेकित दृष्टिकोण जिसका एक अर्थ यह है कि हरिजन समस्या केवल हरिजनों की नहीं है, वह पूरे भारतीय समाज की समस्या है। अतः इसका समाधान परक दृष्टिकोण से नहीं इसके लिए समन्वित दृष्टिकोण अपनाए जाने की आवश्यकता है। हरिजन समस्या न केवल आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक है, सामाजिक जीवन को टुकड़ों में बांटा जा सकता है। सामाजिक पहलू की अवहेलना नहीं की जा सकती। गांधी कहने की अपेक्षा करने पर अधिक विश्वास रखते थे। उन्होंने अस्पृश्यता उन्मूलन, हरिजनोद्धार आन्दोलन का सूत्रपात किया और जीवन पर्यन्त चलाते रहे।

2. सामाजिक परिवर्तन दबाव से नहीं सामाजिक सहमति व हृदय परिवर्तन द्वारा हो–

सामाजिक बदलाव जोर जबरदस्ती द्वारा नहीं बल्कि अहिंसात्मक पद्धति से लाया जाना चाहिये। सामाजिक सहमति द्वारा लाया गया परिवर्तन दीर्घकालीन व स्थायी होगा। जोर जबरदस्ती का प्रभाव तात्कालिक होता है।

3. उपागम

नये समाज की रचना यथार्थ और स्थायी हो, व्यक्ति के विचार, दृष्टिकोण, सोचने के तरिके में परिवर्तन चाहते थे। वे चाहते थे, एक नये समाज में नये मानव का प्रादुर्भाव हो। जाति भेद, छुआ–छूत और हरिजन समस्या के उन्मूलन के लिए जरूरी है, कि समाज से जाति व्यवस्था को उखाड़ फेंका जाए। (इसी निष्कर्ष पर गांधी पहुँचते हैं) उन्होंने हिन्दू मन्दिर के दरवाजे सबके लिए खुलवाए, हरिजन बस्तियों का दौरा किया। अपने आश्रमों के मार्ग से

सवर्ण हरिजन खाई को हृदय परिवर्तन के द्वारा पाटना चाहते थे। इस समस्या को हिन्दू समाज की समस्या मानते थे। हिन्दू समाज का हरिजन को अभिन्न अंग मानते थे, इसलिए अछूतों के लिए अलग निर्वाचन संबंधित शासन निर्णय के विरुद्ध उन्होंने आमरण अनशन दिनांक 27 सितम्बर, 1932 को किया, गांधीजी ने कहा, अम्बेडकर आप जन्म से अछूत है, मैं स्वेच्छा से अछूत हूँ। बौद्ध धर्म, सिक्ख धर्म, कबीर पंथ, ब्राह्मण समाज, आर्य समाज, स्वामी विवेकानन्द और गांधी सबने अपने–अपने तरीके से दलितोद्धार के प्रयत्न किये हैं। लेकिन इनमें से किसी ने जाति प्रथा और हिन्दू समाज के परम्परागत विधान पर वैसा कठोर प्रहार नहीं किया जैसा डॉ. अम्बेडकर ने किया।

डॉ. अम्बेडकर

दलितों की समस्या का मूल कारण दलितों द्वारा ब्राह्मणों की आध्यात्मिक दासता को स्वीकार करना है। अस्पृश्यता और दलितों का सामाजिक, आर्थिक शोषण शास्त्र प्रेरित सिद्धान्तों का स्वाभाविक परिणाम है, जब तक शास्त्र सम्मत वर्णाश्रम कर्म, पुनर्जन्म पर आधारित परंपरात्मक हिन्दू वैचारिकी का अन्त नहीं किया जाता तब तक दलित लोग आर्थिक, शैक्षणिक तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में प्रगति क्यों न करलें, उन्हें समाज में उन्नत सामाजिक दर्जा नहीं मिल सकेगा। अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म में सुधार की अपेक्षा हिन्दू धर्म को छोड़ने का निर्णय किया।

गांधी सामाजिक व्यवस्था को दलित समाज के लिये दोष देते थे। सामाजिक व्यवस्था में सुधारवादी थे। परम्परागत व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन नहीं चाहते थे। इसके विपरीत अम्बेडकर की यह मान्यता थी कि यह समस्या सामाजिक परंपराओं का अपरिहार्य परिणाम है। जब तक इसमें आमूलचूल परिवर्तन करके व्यवस्था समाप्त कर स्थायित्व नहीं हो जाता, तब तक समास्या का हल नहीं हो सकता। अतः अम्बेडकर समाज को पूर्णतः न्यायिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा धार्मिक आयाम देना महत्वपूर्ण मानते थे। डॉ. अम्बेडकर के मन में उच्च हिन्दू जाति के प्रति गहरी विरोधी भावना नहीं थी। अतः वह कहते थे "उन व्यक्तियों और संस्थाओं को अछूतों की बात कहने का कोई हक नहीं जो स्वयं अछूत नहीं।" दलितों से कहा, कि यदि तुम सगंठित होना चाहते हो, शक्ति, सामर्थ्य चाहते हो, स्वतंत्रता, समानता, खुशहाली चाहते हो तो धर्म परिवर्तन करोष् स्वयं अम्बेडकर ने 1956 में 5 लाख व्यक्तियों के साथ बौद्ध धर्म अपना लिया। धर्म परिवर्तन का उद्धेश्य दलित वर्ग को अपनी अलग पहचान और सम्मानपूर्ण स्थिति प्रदान करना था। परन्तु धर्म परिवर्तन से उन्हें अपेक्षित लाभ की प्राप्ति नहीं हो सकी, विशेषकर सामाजिक परिवर्तन नहीं घटित हो सका। अपरंच इसने सामाजिक गतिशीलता की एक कृत्रिम ऊपर से आरोपित प्रक्रिया मात्र प्रस्तुत की, जिसका हिन्दू धर्म एवं समाज की मुख्यधारा से कोई सम्बन्ध नहीं था। व्यक्ति की सामाजिक स्थिति उसके गुणों एवं कर्म से नियमित होती है, धर्म परिवर्तन से नहीं।

अम्बेडकर मानते थे कि सरकारी नौकरियों में सवर्ण हिन्दू का प्राधान्य व्यक्तिगत अत्याचारों को बनाए रखने का जातिगत एक मुख्य कारण था। इसलिये उनका विश्वास था कि सरकारी व्यवहार में न्याय पाने और साथ ही आर्थिक स्थिति ऊँची करने का उपाय यही है कि दलित वर्गों को सरकारी नौकरियाँ दी जायें। अम्बेडकर द्वारा दलित वर्गों के लिये आरक्षण की मांग की और विभिन्न क्षेत्र लोक सभा, विधान सभा, शासकीय सेवाओं में आरक्षण प्रदान किया गया।

अम्बेडकर ने कहा था "छुआछूत का भेदभाव जातिवाद की एक शाखा है, जब तक जातिवाद जीवन में से समाप्त नहीं होगा, तब तक छुआछूत हटने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं।" अम्बेडकर के विचार जाति प्रथा का उन्मूलन पूरा होने के स्थान पर थे। आरक्षण से जाति व्यवस्था कमजोर होने के स्थान पर और भी कठोर तथा जटिल होती गई। समाज आज सवर्ण और दलित वर्गों में बंट गया। राजनीतिज्ञ वोट प्राप्ति के लये इसका सहारा लेने लगे जिससे सम्पूर्ण समाज का राजनैतिक जीवन ही दूषित हो गया। आज जातिगत कठोरता, सुदृढ़ता उत्पन्न होती जा

रही है। समाज ऐसे कगार पर आकर खड़ा हो गया है कि दलितों का शेष समाज के साथ एकीकरण कमजोर पड गया, स्वयं दलित अपने आपको अनुसूचित जाति, जन जाति का बताने में संकोच का अनुभव करते हैं एवं इस कारण स्वयं को हीन समझते हैं। समाज आज विभिन्न खेमों में बंट रहा है, इसके पीछे अम्बेडकर की अनजान भूल थी जिसके उत्पन्न दुष्परिणामों को आज भी हम भुगत रहे हैं। ऐसे कौनसे कारण हैं जो लोकतन्त्र पर आधारित जातिविहीन, शोषण हीन समाज की स्थापना में बाधक हैं, उन्हें खोजना आवश्यक होगा। बाबा साहब के समय और आज की परिस्थितियों में काफी परिवर्तन हो चुका है। आज आवश्यक है, उनके विचारों और नीतियों के पर्यवेक्षण की देश में बनने वाली नीतियों के क्रियान्वयन एवं उनमें पुनर्विचार कर संशोधित करने की, अन्यथा एक दिन सम्पूर्ण समाज में साम्प्रदायिकता की तरह हिन्दू–हिन्दू के मध्य घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा एवं प्रतिशोध की भावना बढ़ जायेगी एवं त्याग के स्थान पर भयानक संघर्ष हो सकते हैं। दूसरी ओर जातिगत आरक्षण से जातियां सुदृढ़ होंगी। आरक्षण से जाति जब समाप्त नहीं हो सकती फिर कैसे इस समस्या से मुक्ति मिलेगी और बाबा साहब का स्वप्न कैसे साकार होगा ? यदि हम मानव की भांति जीना चाहते हैं तो अपने पैरों पर स्वाभिमानपूर्ण खड़ा होना होगा। सम्पूर्ण बुराइयों की जड़ अज्ञानता है, उसे समाप्त करना होगा। शिक्षा का प्रकाश सर्वत्र फैल जाएगा तो अज्ञानता का अंधकार स्वयमेव चला जाएगा। स्वयं अम्बेडकर अनुसार, "शिक्षा समस्त उत्थान का मूल मंत्र है।" इसलिए शिक्षा के विचार का इस समाज के मध्य अधिकाधिक प्रचार होना चाहिये! शिक्षा के प्रचार सं ही इस जाति प्रथा को समाप्त किया जा सकता है। इसके लिये सम्पूर्ण राष्ट्र में 10+2 स्तर तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा कानून द्वारा लागू की जानी चाहिये।

शताब्दी वर्ष में उनके द्वारा प्रतिपादित विचारों का गुणगान कर लेना ही उनके प्रति न्याय नहीं होगा। उन्होंने समाज की जिस वेदना का अनुभव किया, उस वेदना का कोई अनुभव न करे, इसके लिये वास्तविक कार्य करने होंगे। दलितों की समस्याओं के समाधान के सन्दर्भ में देश में 45 वर्षों से संवैधानिक प्रयास महत्वपूर्ण रहे हैं। संविधान में इन्हें दोहरे अधिकार भी दिये हुए हैं, एक सामान्य नागरिक के रूप में प्राप्त अधिकार तथा दूसरे दलित एवं अनुसूचित जाति–जनजाति के रूप में प्राप्त संरक्षण व अधिकार एवं शैक्षणिक, आर्थिक, विकास संबंधी अनेक कार्यक्रमों के पश्चात् अनुसूचित जाति भेद जाति की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हो सका है। समाज समाप्त नहीं हो पाया है एवं दलित वर्ग की एक अलग पहचान समाप्त नहीं हो पाई है।

आज आवश्यकता है, दलित वर्ग के उत्थान के साथ–साथ समाज में अलग स्थान देने पर समाज की मुख्य धारा में इस प्रकार विलीन कर दिया जावे ताकि इसकी अलग पहचान ही संभव न हो, समाज में समन्वय एवं एकात्मकता स्थापित हो सके। सामाजिक एकता ही राष्ट्र रक्षा की प्रबल प्रहरी है, इसके अभाव में राष्ट्र की अक्षुण्यता को खतरा उत्पन्न हो जाएगा, जैसा पूर्व में समय–समय पर होता रहा है । डॉ. अम्बेडकर साहब के स्वप्न को साकार करना, यही उनके प्रति सच्चे अर्थों में श्रद्धांजली होगी।

***राजनीति विज्ञान विभाग**
राजकीय महाविद्यालय
झालावाड़ (राज.)

संदर्भ ग्रन्थ–

1. पूरणमल, दलित संघर्ष और सामाजिक न्याय, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2002, पृ. 2
2. अम्बेडकर, भीमराव रामजी, जाति का विनाश, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली।

अस्पृश्यता निवारण में भारतीय मनीषियों का योगदान

डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा

3. बी.आर. अम्बेडकर, शुद्र कौन थे, भारत सरकार प्रकाशन विभाग, दिल्ली।
4. अस्पृश्यता की उत्पत्ति, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
5. आर.एस. शर्मा, भारतीय सामाजिक संरचना और जाति व्यवस्था, मैकमिलन पब्लिशर्स।
6. डी. धर्मपाल, भारतीय समाज में अस्पृश्यता और इसके ऐतिहासिक कारण, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली।